हिंदी कवि आचार्यों का काव्यशास्त्रीय चिंतन

# लक्षण काव्य-परंपरा

---

**डॉ. जय प्रकाश**

1. संस्कृत काव्यशास्त्र में रस अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि, औचित्य आदि विभिन्न प्रतिमानों के आधार पर काव्य अथवा साहित्य के रसास्वादन की पद्धतियाँ विकसित हुईं। इनमें से कुछ अत्यंत लोकप्रिय हुईं। हिंदी के रीतिकालीन कवियों ने इन प्रतिमानों को न सिर्फ़ अपनाया, बल्कि उनके आधार पर काव्य-रचना की एक परंपरा भी विकसित की।

2. संस्कृत काव्यशास्त्र में आचार्यों ने काव्य के लक्षण निर्धारित किए थे। उनके आधार पर संस्कृत में, फिर हिंदी के रीतियुग में साहित्य सृजन की परंपरा का विकास हुआ। काव्य के शास्त्रीय मानदण्डों और लक्षणों के आधार पर उसके आस्वादन और मूल्यांकन की इस परंपरा को **लक्षण-काव्य-परंपरा** कहा गया है। भक्ति काल में भी कुछ लक्षण-ग्रंथ रचे गए। सूरदास की प्रसिद्ध रचना 'साहित्य लहरी' को लक्षण-ग्रंथ माना जा सकता है। उनके अलावा कृपाराम की 'हिम तरंगिनी' और नंददास की 'रसमंजरी' भी लक्षण ग्रंथ हैं।

3. हिंदी में रीतिकाल के दौरान तीन प्रकार का साहित्य मिलता है – रीतिबद्ध काव्य, रीतिसिद्ध काव्य और रीतिमुक्त काव्य। रीतिबद्ध और रीतिसिद्ध कवि काव्यशास्त्र के नियमों का पालन करते हुए काव्य रचना करते थे जबकि रीतिमुक्त कवि काव्यशास्त्र के अनुशासन की चिंता नहीं करते थे।

**रीतिबद्ध काव्य** की रचना उन कवियों ने जिन्होंने काव्य के साथ संस्कृत की शास्त्रीय परंपरा के ग्रंथों का अनुसृजन किया अथवा काव्य-लक्षणों की व्याख्या करते हुए स्वतंत्र शास्त्रीय ग्रन्थों की भी रचना की। ये कवि काव्यशास्त्र के मर्मज्ञ तो थे ही गुणग्राही कवि भी थे। रीतिबद्ध कवियों में चिंतामणि, केशव, देव, मतिराम, भिखारी, पद्माकर, कुलपति मिश्र आदि प्रमुख हैं।

इन विद्वान शास्त्रज्ञ कवियों को आचार्य, शास्त्र-कवि, कवि-शिक्षक या आचार्य कवि भी कहा गया है। काव्यांग-विवेचन के आधार पर इन्हें दो वर्गों में रखा जा सकता है –
**सर्वांग विवेचक –** जिन कवियों ने काव्यशास्त्र के सभी संप्रदायों का विवेचन किया उन्हें सर्वांग विवेचक कहा गया।
**विशिष्टांग विवेचक –** जिन कवियों ने काव्य शास्त्र के कुछ विशिष्ट संप्रदायों अर्थात एक या दो काव्यांगों की व्याख्या की उन्हें विशिष्टांग विवेचक माना गया।

इन सभी कवियों ने पहले सिद्धांत-निरूपण किया और लक्षण-ग्रंथ लिखे। फिर लक्षणों के उदाहरण के रूप में काव्य की रचना की। इन कवियों ने संस्कृत के आचार्यों की तरह कोई नया साहित्य-सिद्धांत प्रतिपादित नहीं किया। संस्कृत के साहित्य-सिद्धांतों को इन्होंने सिर्फ़ पुनर्प्रस्तुत किया। इसलिए इनके ग्रन्थों में मौलिकता नहीं है। वे संस्कृत काव्यशास्त्रीय सिद्धांतों के

अनुकरण-मात्र हैं। निश्चय ही हिंदी के रीतिबद्ध कवि संस्कृत काव्यशास्त्र के ज्ञाता थे, इसलिए आचार्य कहलाए।

**रीतिबद्ध** कवियों ने लक्षण-ग्रन्थों की रचना नहीं की। लेकिन काव्य-लक्षणों के अनुरूप साहित्य की रचना की। उनकी रचनाओं को **लक्ष्य-ग्रन्थ** कहा जाता है।

**रीतिसिद्ध** कवियों ने काव्यशास्त्र के नियमों का पालन किया, लेकिन उन्होंने कोई स्वतंत्र शास्त्रीय ग्रंथ (लक्षण-ग्रन्थ) नहीं लिखा।

4. रीतिबद्ध कवियों द्वारा रचे गए लक्षण ग्रंथ काव्य-प्रवृत्ति के आधार पर सामान्यतः तीन प्रकार के हैं –
**अलंकार विषयक लक्षण-ग्रंथ :** अलंकार विषयक लक्षण-ग्रंथों में केशव की प्रसिद्ध रचना 'कवि प्रिया', जसवंत सिंह रचित 'भाषा-भूषण' कवि भूषण रचित 'शिवराज भूषण' कवि ग्वाल द्वारा रचित 'अलंकार भ्रम-भंजन' और मतिराम की कृति 'ललित लीलाम' महत्त्वपूर्ण हैं। इन ग्रंथों में श्रृंगारिकता की प्रवृति मिलती है।

**रस व नायिका-भेद संबंधी लक्षण-ग्रंथ :**
इस श्रेणी की रचनाओं में भी श्रृंगारिक ग्रंथ सम्मिलित हैं। इनमें चिंतामणि लिखित 'श्रृंगार मंजरी' मतिराम रचित 'रसराज' भिखारीदास कृत 'श्रृंगार-निर्णय' और आचार्य सोमनाथ द्वारा रचित 'श्रृंगार-विलास' आदि प्रमुख हैं।

**रस-विषयक लक्षण-ग्रंथ :** रस को केंद्र में रखकर रचे गए लक्षण ग्रंथों में कुलपति मिश्र का 'रस-रहस्य' आचार्य चिंतामणि का 'रसविलास' देव का 'रसविलास' आचार्य सोमनाथ का 'पीयूष-निधि' और भिखारी दास द्वारा रची गई कृति 'रस-रसायन' शामिल हैं।

इन ग्रंथों में सर्वांग विवेचन और विशिष्टांग विवेचन दोनों प्रकार के लक्षण-ग्रंथ समाहित हैं । **सर्वांग विवेचन** के लक्षण ग्रंथ हैं – कविकुल कल्पतरु, शब्द रसायन, रस रहस्य इत्यादि। **विशिष्टांग विवेचन** के लक्षण ग्रंथों में सुंदर श्रृंगार, रस-किल्लोल, रसिक विलास, रस चंद्रिका इत्यादि।

## 5. हिंदी के प्रमुख कवि-आचार्य

### चिंतामणि
आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने चिंतामणि को हिंदी में लक्षण-काव्य-परंपरा या रीति-साहित्य का प्रवर्तक माना है। डॉ नगेंद्र और भगीरथ मिश्र की भी यही धारणा है। आचार्य शुक्ल ने लिखा है – "हिंदी रीतिग्रंथों की अखंड परंपरा चिंतामणि त्रिपाठी से चली, अतः रीति-काल का प्रारंभ उन्हीं से मानना चाहिए। उन्होंने संवत् १७०० के कुछ आगे पीछे 'काव्यविवेक', 'कविकुल-कल्पतरु' और 'काव्य-प्रकाश' ये तीन ग्रंथ लिख- कर काव्य के अब अंगों का पूरा निरूपण किया और पिंगल या छदः शास्त्र पर भी एक पुस्तक लिखी।" इन ग्रंथों में 'कविकुल कल्पतरु' में रीति, रस, नखशिख-वर्णन, नायिका-भेद, काव्यगुण, काव्यदोष आदि की विशद रूप से चर्चा की गई है। इन विषयों पर यह हिंदी में पहला ग्रंथ है।

### आचार्य केशवदास

केशवदास अलंकारवादी आचार्य और चमत्कारवादी कवि थे। उन्होंने रस-सिद्धांत पर एकाग्र 'रसिकप्रिया' और अलंकार सिद्धांत पर आधारित 'कवि प्रिया' लक्षण-ग्रंथों की रचना की। उन्होंने रामकथा पर आधारित प्रबंध-काव्य 'रामचंद्रिका' का भी सृजन किया। लेकिन उन्हें कवि से अधिक आचार्य के रूप में ख्याति मिली।

**आचार्य कुलपति मिश्र**

आचार्य कुलपति मिश्र को संस्कृत काव्यशास्त्र का विशद ज्ञान था। इसलिए उनकी कृतियों में अन्य लक्षण ग्रंथों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक परिपक्व विवेचन मिलता है। लेकिन उनमें मौलिकता नहीं है। उनका 'रस रहस्य' आचार्य मम्मट के 'काव्य प्रकाश' से न सिर्फ़ प्रभावित है, बल्कि उसका छायानुवाद है। उनका 'काव्य प्रकाश' भी आचार्य विश्वनाथ के 'साहित्य दर्पण' से प्रभावित है, यद्यपि विषय-प्रतिपादन की दृष्टि से उसमें उल्लेखनीय स्पष्टता है।

**मतिराम**

मतिराम रस निरूपण के आचार्य थे उन्होंने आठ ग्रंथों की रचना की, जिनमें 'रसराज', 'ललित ललाम', 'लक्षण श्रृंगार', 'साहित्यसार' प्रमुख हैं। उनके 'रसराज' में श्रृंगार का सर्वांगीण विवेचन करते हुए उसे सर्वोपरि रस 'रसराज' माना गया है।

**कवि देव**

देव उत्कृष्ट कवि और विद्वान आचार्य थे। लेकिन उनके लक्षण-ग्रंथों में विद्वत्ता और पाण्डित्य का आतंक नहीं, बल्कि सहृदय की सहजता मिलती है। उनके 'भाव-विलास' और 'शब्द-रसायन' में प्रायः समस्त काव्यांगों का उल्लेख मिलता है।

**आचार्य भिखारी दास**

आचार्य भिखारी दास ने 'रस-सारांश', 'काव्य-निर्णय', 'श्रृंगार-निर्णय' इत्यादि ग्रंथों की रचना की। उनके 'रस-सारांश' में रस-सिद्धांत और 'श्रृंगार-निर्णय' में नायिका-भेद और नखशिख का विवेचन है।

**तोष**

माना जाता है कि तोष ने तीन लक्षण-ग्रंथों की रचना की थी, लेकिन उनमें से केवल एक ग्रंथ 'सुधा निधि' ही उपलब्ध है।

**रसलीन**

रसलीन ने दो लक्षण-ग्रंथों का प्रणयन किया – 'रस-बोध' तथा 'अंग-दर्पण'। 'रस-बोध' में रसों का वर्णन है। इसमें विशेष तौर पर श्रृंगार और नायिका-भेद का विवेचन किया गया है।

**पद्माकर**

पद्माकर रीतिकाल के श्रेष्ठ कवि हैं। वे काव्यशास्त्र के भी अधीत विद्वान थे। 'जगद्विनोद' उनका प्रसिद्ध ग्रंथ है जिसमें रस के अंग-उपांग का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया है। उनका दूसरा महत्त्वपूर्ण ग्रंथ 'पद्माभरण' है जिसमें अलंकार विवेचन किया गया है।

**भूषण**
भूषण रीतिकाल के श्रृंगार इक्ता के दायरे को तोड़कर वीर रस की कविता करते हैं उनका 'शिवराज भूषण' एक लक्षण-ग्रंथ है जिसमें अलंकारों का विस्तृत विवेचन मिलता है।

**6. लक्षण-काव्य-परंपरा की विशेषताएँ**

**1. संस्कृत-काव्यशास्त्र पर पूर्ण निर्भरता :** लक्षण-काव्य-परंपरा संस्कृत साहित्यशास्त्र के सिद्धांतों पर पूरी तरह निर्भर थी। हिंदी के कवि-आचार्यों ने काव्य-लक्षण, काव्यगुण, काव्यदोष, काव्यांग-विवेचन आदि पूर्व-प्रचलित प्रतिमानों से हट कर नए काव्य-प्रतिमानों के विकास का प्रयत्न नहीं किया। इसलिए लक्षण काव्य परंपरा में नवीनता और मौलिकता का सर्वथा अभाव है। आचार्यत्त्व के अनुरूप सूक्ष्म विश्लेषण-क्षमता की भी कमी दिखाई पड़ती है।

**2. रीतिग्रंथों की रचना :** रीतिबद्ध कवियों ने बड़ी संख्या में काव्यशास्त्र के ग्रंथ लिखे। इन ग्रंथों में रूढ़ सिद्धांत-निरूपण और पिष्टपेषण है।

**3. श्रृंगारिकता की मुख्य प्रवृत्ति :** लक्षण-काव्य-परंपरा में श्रृंगार-वर्णन की प्रवृत्ति को काव्य के सर्वोच्च गुण के रूप में प्रतिष्ठा मिली। आचार्यों ने श्रृंगार को रसराज मानकर विवेचना की। इसलिए रीति-काव्य में नखशिख-वर्णन, नायिका-भेद और ऋतुवर्णन की प्रधानता दिखाई पड़ती है। सभी कवि और आचार्य दरबारी थे। इसलिए दरबारियों के मनोरंजन के लिए श्रृंगार-रस को उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया गया और उसकी ऐन्द्रिकता को सैद्धांतिक वैधता प्रदान करने के लिए उसे काव्य-मानदण्ड के तौर पर स्थापित किया गया।

**4. आलंकारिकता और चामत्कारिकता :** क्योंकि काव्य-रचना का उद्देश्य आश्रयदाता शासक और दरबारियों का मनोरंजन था, इसलिए उन्हें प्रसन्न करने के लिए काव्य में भरसक चमत्कार उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया, जिसकी सैद्धांतिक आधारभूमि लक्षण-ग्रंथों ने तैयार की।

**5. काव्य के स्थूल सौंदर्य का संधान :** श्रृंगार-प्रधान काव्य को प्रतिष्ठित किये जाने के कारण लक्षण-ग्रंथों में उसके आंतरिक भाव-सौंदर्य की उपेक्षा हुई और बाह्य उपकरणों को सौंदर्य का आधार माना गया। इन उपकरणों में अलंकार और बिंब इत्यादि प्रमुख हैं।

**6. प्रबंधात्मकता की उपेक्षा** : लक्षण-काव्य-परंपरा में प्रबंधात्मकता की प्रायः उपेक्षा की गई। इसलिए दरबारी-परंपरा के अनुरूप रीतिकाल में ज़्यादातर मुक्तक-काव्य की रचना हुई।

**इस तरह लक्षण-काव्य परंपरा वस्तुतः उत्तर-मध्य-काल की सामंती-दरबारी मनोवृत्ति के अनुरूप एक तरह की व्यक्तिवादी, स्वकेन्द्रित और परावलंबी साहित्यिक विचारधारा के रूप में फली-फूली और रीतियुग की परिस्थितियाँ समाप्त होते ही उसका अवसान हो गया।**

---

शास. विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग (छ. ग)